

दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

सुरक्षित : 26 सितंबर, 2023

उद्घोषित : 1 फरवरी, 2024

वै.आ. (परि.न्या.) 172/2022 और सि.वि.आ. 64721/2022 (रोक)

मोहित आनंद

.....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री परनजय चोपड़ा, अधिवक्ता।

बनाम

पारुल आनंद

..... प्रत्यर्थी

द्वारा: प्रत्यर्थी के साथ अधिवक्तागण,
श्री वाई. के. सिंह और श्री
प्रणयनाथ झा व्यक्तिगत रूप से।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति श्री सुरेश कुमार कैत

माननीय न्यायमूर्ति सुश्री नीना बंसल कृष्णा

निर्णय

न्या. नीना बंसल कृष्णा

1. परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 के तहत अपीलकर्ता/पति की ओर से वर्तमान अपील दिनांक 30.09.2022 के आदेश के विरुद्ध दायर की गई है जिसके माध्यम से अपीलकर्ता/पति को हिंदू विवाह अधिनियम (इसके बाद एचएमए, 1955 के रूप में संदर्भित) की धारा 24 के तहत दिए गए रखरखाव के बकाया का भुगतान न करने के कारण सिविल कारावास के लिए

निष्पादन याचिका सं. 11/2020 के अंतर्गत हिरासत में लेने का निर्देश दिया गया है।

2. संक्षिप्त में, तथ्य यह है कि पक्षगण का विवाह दिनांक 14.04.1999 में हिन्दू रीति-रिवाजों से सम्पन्न हुआ था। हालांकि, उनके बीच मतभेदों के कारण, प्रत्यर्थी/पत्नी अपीलकर्ता/पति से अलग हो गई और एचएमए, 1955 की धारा 13(1)(झक) के तहत तलाक याचिका सं. एचएमए 630/2014 (एचएमए सं. 48/2018 के रूप में पुनः पंजीकृत) दायर की थी। मुकदमे के दौरान, एचएमए, 1955 की धारा 24 के तहत अपीलकर्ता/पति के खिलाफ दिनांक 28.09.2015 को एक आदेश दिया गया था जिसके माध्यम से उसे आवेदन दाखिल करने की तारीख से दोनों बच्चों में से प्रत्येक को 14,000/- रुपये प्रति माह और प्रत्यर्थी/पत्नी को 16,000/- रुपये प्रति माह का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। रखरखाव के अलावा, प्रत्यर्थी/पत्नी को मुकदमेबाजी के खर्च के रूप में 20,000/- रुपये दिए गए थे।

3. जब तक तलाक की कार्यवाही लंबित थी, प्रत्यर्थी/पत्नी ने *निष्पादन याचिका सं. 27/2018* के माध्यम से अपने और बच्चों को अंतरिम रखरखाव प्रदान करने वाले अंतरिम आदेश दिनांक 28.09.2015 को लागू करने की मांग की गई। इस निष्पादन याचिका में, अपीलकर्ता/पति को हिरासत में ले लिया गया और दिनांक

24.02.2021 को अधिकतम तीन महीने की सजा अवधि के लिए सिविल कारावास भेज दिया गया, जिसे अपीलकर्ता/पति द्वारा पूरा किया गया था।

4. अपीलकर्ता/पति तलाक की कार्यवाही में उपस्थित होने में विफल रहा और उस पर *एकपक्षीय* कार्यवाही की गई और दिनांक 22.05.2020 के निर्णय के तहत तलाक मंजूर कर लिया गया।

5. प्रत्यर्थी ने अंतरिम रखरखाव के उसी आदेश दिनांक 28.09.2015 के निष्पादन के लिए एक और *निष्पादन याचिका सं. 11/2020* दायर की। अब फिर से, विद्वान परिवार न्यायाधीश ने दिनांक 30.09.2022 के आदेश के तहत निर्देश दिया कि चूंकि निर्णित ऋणी/अपीलकर्ता/पति तलाक की डिक्री की तारीख तक 22,00,000/- रुपये के रखरखाव की बकाया राशि का भुगतान करने के लिए तैयार नहीं था, इसलिए उसे हिरासत में लिया जाए और दिनांक 26.10.2022 तक सिविल कारावास में भेजा जाए। प्रत्यर्थी/पत्नी को नियमानुसार तीन दिनों के भीतर निर्वाह भत्ता जमा करने का निर्देश दिया गया था।

6. दिनांक 30.09.2022 के आक्षेपित आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी/पति ने *वर्तमान अपील दायर की है।*

7. *अपीलकर्ता की ओर से यह प्रस्तुत किया गया है* कि अपीलकर्ता/पति को सिविल कारावास में भेजने का आक्षेपित आदेश दिनांक 30.09.2022 सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (इसके बाद "सि.प्र.स, 1908" के रूप में संदर्भित) की

धारा 58 के संदर्भ में बिल्कुल अवैध और विकृत है। अपीलकर्ता/पति पहले ही 28.09.2015 के अंतरिम रखरखाव आदेश के संबंध में सि.प्र.सं. 1908 की धारा 58 में निर्धारित अधिकतम तीन महीने की सजा काट चुका है और उसे उसी आदेश के निष्पादन के लिए फिर से जेल नहीं भेजा जा सकता है।

8. यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान न्यायाधीश अपीलकर्ता को प्रत्येक महीने की चूक के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत कारावास की सजा सुना सकता है, यह सिविल कार्यवाही में स्वीकार्य नहीं है। रजनीश बनाम नेहा (2021) 2 एससीसी 324 के मामले पर निर्भर किया गया है जिसमें उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा है कि रखरखाव के आदेश को दं.प्र.सं. के प्रावधानों के अनुसार सिविल न्यायालय में मनी डिक्री के रूप में लागू किया जा सकता है, विशेष रूप से आदेश 21 के साथ पठित धारा 51, 55, 58, 60 में।

9. यह आरोप लगाया गया है कि दिनांक 30.09.2022 का आदेश दं.प्र.सं. के आदेश XXI नियम 11क का सीधा उल्लंघन है क्योंकि डिक्री धारक/प्रत्यर्थी द्वारा अपीलकर्ता की गिरफ्तारी की मांग करने वाला कोई आवेदन नहीं था। इसके अलावा, आदेश पारित करने से पहले अपीलकर्ता को कोई कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया गया था और इस आधार पर इसे रद्द किया जा सकता है।

10. इसलिए, परिवार न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा निष्पादन याचिका सं. 11/2020 में दिनांक 30.09.2022 को पारित आक्षेपित आदेश को रद्द किया जाए।

11. दिनांक 03.11.2022 के आदेश के तहत, इस न्यायालय ने अपीलकर्ता को पारिवारिक न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश के आदेश के संदर्भ में हिरासत में लेने के खिलाफ रोक लगा दी, जिसे बाद की तारीखों के लिए जारी रखा गया था।

12. *प्रत्यर्थी/पत्नी अपने अधिवक्ता द्वारा पेश हुई*, हालांकि उनकी ओर से कोई औपचारिक जवाब दायर नहीं किया गया है।

13. अपीलकर्ता ने अपने लिखित प्रस्तुति में कहा है कि परिवार न्यायालय अधिनियम की धारा 18 के अनुसार परिवार न्यायालय *दं.प्र.सं.* के तहत प्रदान की गई प्रक्रिया के अनुसार आदेशों को निष्पादित करने के लिए बाध्य है। हालांकि, परिवार न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश, अपीलकर्ता को रखरखाव के उसी आदेश के निष्पादन में दूसरी बार सिविल कारावास का निर्देश देना *दं.प्र.सं.* की धारा 36, 51(ग) और 58(2) के तहत प्रदान की गई वैधानिक व्यवस्था के विपरीत है। इस सम्बन्ध में मेसर्स भंडारी इंजीनियर्स व बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम मेसर्स महारिया राज ज्वाइंट वेंचर व अन्य 2021 एससीसी ऑनलाइन डेल 3595; धनलक्ष्मी अम्मल बनाम कृष्णमूर्ति, एआईआर 1951 मैड 756; दामिरन सेन बनाम अर्पिता सेन, 2008 एससीसी ऑनलाइन

कल. 647; संजीत सिंह बनाम अनुपमा 245 (2017) दिल्. 145: राजेश अरोडा बनाम सोनिया अरोडा और अन्य 2020 एससीसी ऑनलाइन पी&एच 4562; जॉली जॉर्ज वर्गीज व अन्य बनाम बैंक ऑफ कोचीन, (1980) 2 एससीआर 913 और दामोदर शालिग्राम बनाम मल्हारी व अन्य आईएलआर 1883 7 बोम., मामलों पर निर्भर किया गया है।

14. पक्षों के अधिवक्तागण को सुना गया और दस्तावेजों के साथ-साथ साक्ष्यों का अवलोकन किया गया।

15. *तथ्यात्मक पृष्ठभूमि* यह है कि पक्षकारों ने हिंदू रीति-रिवाजों और संस्कारों के अनुसार दिनांक 14.04.1999 को विवाह किया था। यह उनका प्रेम विवाह था जिसे दोनों पक्षों के माता-पिता की मंजूरी नहीं थी। इसके बाद, पक्षों के बीच मतभेद पैदा हुए और प्रत्यर्थी/पत्नी ने अपीलार्थी/पति के साथ रहना छोड़ दिया और क्रूरता के आधार पर एचएमए, 1955 की धारा 13(1)(झक) के तहत तलाक याचिका दायर की।

16. अंतरिम भरण-पोषण एचएमए, 1955 की धारा 24 के तहत दिनांक 28.09.2015 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी/पत्नी और दो बच्चों के लिए कुल 44,000/- रुपये की राशि में प्रदान किया गया था। अपीलकर्ता/पति उपरोक्त तलाक याचिका का विरोध करने में विफल रहे और उन पर *एकपक्षीय* कार्यवाही

की गई। तदनुसार, प्रत्यर्थी/पत्नी को दिनांक 22.05.2020 के आदेश के तहत तलाक दिया गया।

17. तलाक की कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, प्रत्यर्थी ने 28.09.2015 के अंतरिम रखरखाव के आदेश के संबंध में *निष्पादन याचिका सं. 27/2018* दायर की, जिसमें बकाया रखरखाव की राशि का दावा किया गया था। उक्त कार्यवाही में, भरण-पोषण का भुगतान न करने के कारण अपीलकर्ता/पति को हिरासत में ले लिया गया और 24.02.2021 को तीन महीने की अवधि के लिए सिविल कारावास भेज दिया गया, जो अधिकतम सजा थी और उन्होंने इस दंड को भोगा।

18. पहले की निष्पादन याचिका के लंबित रहने के दौरान, प्रत्यर्थी ने एक और निष्पादन याचिका सं. 11/2020 दायर की थी, जो इस अपील की विषयवस्तु है। परिवार न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने आक्षेपित आदेश दिनांक 30.09.2022 के तहत अपीलकर्ता/पति के आचरण पर रखरखाव आदेश का अनुपालन नहीं करने पर विचार किया जिसके अनुसार रखरखाव के लिए लगभग 22,00,000/- रुपए की राशि जमा की गई थी जिसे अपीलकर्ता/पति भुगतान करने से अस्वीकार कर रहा था। परिवार न्यायालय ने कहा कि भले ही अपीलकर्ता/पति को पहले वर्ष 2021 में सिविल कारावास में भेजा गया था, इसके बावजूद वह भुगतान करने को तैयार नहीं है। चूंकि डिक्री धारक प्रत्येक

महीने की हुई चूक के लिए अलग-अलग निष्पादन याचिका दायर कर सकता है, अपीलकर्ता/पति को प्रत्येक माह को हुई चूक के लिए बार-बार सिविल कारावास भेजा जा सकता है और इसलिए, अपीलकर्ता को हिरासत में लेने का निर्देश दिया गया और दिनांक 26.10.2022 को सिविल कारावास में भेज दिया गया।

19. हालांकि, उसी तारीख को, लगभग 03:30 बजे, प्रत्यर्थी/पत्नी/डिक्री धारक के पक्ष में तैयार किए गए 2,00,000/- रुपये के डिमांड ड्राफ्ट की निविदा पर, सिविल कारावास के आदेश को तब तक निलंबित कर दिया गया जब तक कि मासिक रखरखाव के मामले में सिविल कारावास के बारे में कानून के बिंदु पर स्पष्टीकरण इस न्यायालय से नहीं मांगा गया था, जिस पर वर्तमान मामले में चर्चा की जा रही है।

20. प्रारंभ में, रखरखाव के आदेशों के प्रवर्तन के संबंध में कानून का विश्लेषण करना उचित है।

I. क्या रखरखाव डिक्री को सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के अनुसार निष्पादित किया जाना है:

21. परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 18 में सि.प्र.सं./दं.प्र.सं. के प्रावधानों के अनुसार परिवार न्यायालय द्वारा पारित डिक्रियों और आदेशों के निष्पादन का प्रावधान है और यह निम्नानुसार है:-

धारा 18. डिक्रियों और आदेशों का निष्पादन:—

(1) परिवार न्यायालय द्वारा पारित किसी डिक्री या आदेश का [दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय IX के तहत आदेश के अलावा] सिविल न्यायालय की डिक्री या आदेश के समान बल और प्रभाव होगा और उसे उसी तरीके से निष्पादित किया जाएगा जैसा कि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) द्वारा डिक्रियों और आदेशों के निष्पादन के लिए निर्धारित किया गया है।

(2) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय IX के तहत परिवार न्यायालय द्वारा पारित आदेश को उस संहिता से ऐसे आदेश के निष्पादन के लिए निर्धारित तरीके से निष्पादित किया जाएगा।

(3) डिक्री अथवा आदेश या तो परिवार न्यायालय द्वारा निष्पादित किया जा सकता है जो इसे पारित करता है व अन्य परिवार न्यायालय या सामान्य सिविल न्यायालय द्वारा जिसे इसे निष्पादन के लिए भेजा जाता है।

22. रजनीश (पूर्वोक्त) के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि निष्पादन के आदेश के लिए आवेदन निम्नलिखित प्रावधानों के तहत दायर किया जा सकता है, जो लागू हो सकते हैं:

(क) एचएमए की धारा 24 (कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष) के निष्पादन के लिए परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 18 और सि.प्र.सं. के आदेश 21 नियम 94 सहपठित एचएमए, 1955 की धारा 28-क;

ख) न्यायिक दंडाधिकारी के समक्ष डीवी अधिनियम की धारा 20(6);

ग) दंडाधिकारी के न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 128।

23. रजनीश (पूर्वोक्त) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा कि रखरखाव के आदेशों के लागू/निष्पादन के लिए यह निर्देश दिया जाता है कि हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 28-क के तहत रखरखाव का आदेश या

डिक्री लागू की जा सकती है; डीवी अधिनियम की धारा 20(6); और दं.प्र.सं. की धारा 128, जैसा लागू हो सकती है। भरण-पोषण के आदेश को सि.प्र.सं. के प्रावधानों के अनुसार सिविल न्यायालय की मनी डिक्री के रूप में लागू किया जा सकता है, विशेष रूप से आदेश 21 सहपठित धारा 51, 55, 58, 60।

24. इसलिए, यह स्पष्ट है कि एचएमए, 1955 के धारा 24 के तहत रखरखाव के बकाया की वसूली के लिए पारित डिक्री और आदेश का बल और प्रभाव सिविल कोर्ट के डिक्री के समान होगा और इसे सि.प्र.सं., 1908 के आदेश 21 नियम 94 में विस्तृत प्रक्रिया के अनुसार वसूल किया जाना है। इस प्रकार हम यह मानते हैं कि एचएमए की धारा 24 के तहत आदेश एचएमए, 1955 की धारा 28-क के तहत लागू किया जा सकता है जो परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 18 और सि.प्र.सं. के साथ पढ़ा जा सकता है।

II. धन आदेश के निष्पादन में भुगतान की चूक में सिविल कारावास के लिए सि.प्र.सं. के तहत प्रक्रिया।

25. यह निष्कर्ष निकालने के बाद कि एचएमए की धारा 24 के तहत रखरखाव का आदेश सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत मनी डिक्री की तरह निष्पादन योग्य है, हम संबंधित अनुभागों पर विचार कर सकते हैं। सि.प्र.सं. की धारा 51 निष्पादन को लागू करने के लिए न्यायालय के दायरे और शक्तियों को परिभाषित करती है जो निम्नानुसार है: -

“धारा 51: निष्पादन को लागू करने के लिए न्यायालय की शक्तियाँ।—

ऐसी शर्तों और सीमाओं के अधीन, जो निर्धारित की जा सकती हैं, न्यायालय, डिक्री-धारक के आवेदन पर, डिक्री के निष्पादन का आदेश दे सकता है

(क) विशेष रूप से आदेशित किसी भी संपत्ति की डिलीवरी द्वारा;

(ख) कुर्की और विक्रय द्वारा या किसी संपत्ति की कुर्की के बिना विक्रय द्वारा;

(ग) गिरफ्तारी और हिरासत में ऐसी अवधि के लिए जो धारा 58 में निर्दिष्ट अवधि से अधिक न हो, जहां उस धारा के तहत गिरफ्तारी और हिरासत की अनुमति है;

(घ) एक रिसीवर नियुक्त करके; या

(ङ) ऐसे अन्य तरीके से जैसा कि दी गई राहत की प्रकृति के लिए आवश्यक हो;

बशर्ते कि, जहां डिक्री पैसे के भुगतान के लिए है, जेल में नजरबंदी द्वारा निष्पादन का आदेश तब तक नहीं दिया जाएगा, जब तक कि निर्णित ऋणी को यह दिखाने का अवसर न दिया जाए कि उसे जेल में क्यों नहीं भेजा जाना चाहिए, दर्ज किए गए कारणों के लिए न्यायालय लिखित रूप से, संतुष्ट है-

(क) निर्णित ऋणी, डिक्री के निष्पादन में बाधा डालने या विलंब करने के उद्देश्य या प्रभाव से-

(i) न्यायालय की अधिकार क्षेत्र की स्थानीय सीमाओं को छोड़कर फ़रार होने की संभावना है, या

(ii) उस मुकदमे के संस्थित होने के बाद, जिसमें डिक्री पारित की गई थी, बेईमानी से अपनी संपत्ति का कोई हिस्सा हस्तांतरित, छुपाया या हटा दिया है, या अपनी संपत्ति के संबंध में कोई अन्य दुर्भावनापूर्ण कार्य किया है, या

(ख) निर्णित ऋणी के पास डिक्री की तारीख से या उसके पास डिक्री की राशि या उसके कुछ महत्वपूर्ण हिस्से का भुगतान करने का साधन है और वह उसे भुगतान करने से इनकार या उपेक्षा करता है या इनकार या उपेक्षा चुका है, या

(ग) कि डिक्री उस राशि के लिए है जिसका हिसाब देने के लिए निर्णित ऋणी वैश्वासिक क्षमता में बंधा हुआ था।”

26. सि.प्र.सं. के आदेश XXI के नियम 37 और 40 में निर्णित ऋणी को जेल में हिरासत में रखने की प्रक्रिया निम्नानुसार निर्धारित की गई है: -

आदेश XXI: डिक्री के अधीन डिक्री और भुगतान आदेशों का निष्पादन -

नियम 37. कारागार में निरुद्ध किए जाने के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने के लिए निर्णित ऋणी को अनुज्ञा देने की वैवेकिक शक्ति—

(1) इन नियमों में किसी बात के होते हुए भी, जहां धन के संदाय के लिए डिक्री का निष्पादन ऐसे निर्णित ऋणी की जो आवेदन के अनुसरण में गिरफ्तार किए जाने के दायित्व के अधीन है, गिरफ्तारी और सिविल कारागार में निरोध के द्वारा करने के लिए आवेदन है वहां न्यायालय उसकी गिरफ्तारी के लिए वारण्ट निकालने के बदले उससे यह अपेक्षा करने वाली सूचना उसके नाम [निकालेगा] कि उस दिन को जो उस सूचना में विनिर्दिष्ट किया

जाएगा, वह न्यायालय में उपसंजात हो और हेतुक दर्शित करे कि सिविल कारागार को उसे क्यों न सुपुर्द कर दिया जाए :

[परन्तु यदि न्यायालय का शपथपत्र द्वारा या अन्यथा यह समाधान हो जाता है कि यह सम्भाव्यता है कि निर्णीतऋणी डिक्री के निष्पादन में विलम्ब करने के उद्देश्य से फरार हो जाए या न्यायालय की अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं को छोड़ दे या उसके ऐसा करने का परिणाम यह होगा कि डिक्री के निष्पादन में विलम्ब होगा तो ऐसी सूचना देना आवश्यक नहीं होगा।]

(2) जहां सूचना के आज्ञानुवर्तन में उपसंजाति न की जाए वहां यदि डिक्रीदार ऐसा अपेक्षित करे तो न्यायालय निर्णीतऋणी की गिरफ्तारी के लिए वारण्ट निकालेगा।

नियम 40. नोटिस की आज्ञानुवर्तन में या गिरफ्तारी के पश्चात निर्णीतऋणी के उपसंजात होने पर कार्यवाही।—

(1) जब निर्णीतऋणी नियम 37 के अधीन निकाली गई सूचना के आज्ञानुवर्तन में न्यायालय के सामने उपसंजात होता है, या धन के संदाय की डिक्री के निष्पादन में गिरफ्तार किये जाने के पश्चात न्यायालय के समक्ष लाया जाता है तब न्यायालय डिक्री धारक को सुनने के लिए अग्रसर होगा और ऐसे सभी साक्ष्य लेगा जो निष्पादन के लिए अपने आवेदन के समर्थन में उसके द्वारा पेश किया जाए और तब निर्णीतऋणी को हेतुक दर्शित करने का अवसर देगा कि वह सिविल कारागार को क्यों न सुपुर्द कर दिया जाए।

(2) उपनियम (1) के अधीन या तो जांच की समाप्ति लम्बित रहने तक न्यायालय स्वविवेकानुसार आदेश कर सकेगा कि निर्णीतऋणी न्यायालय के अधिकारी की अभिरक्षा में निरुद्ध किया जाए या उसके द्वारा न्यायालय को समाधानप्रद रूप में इस बात की प्रतिभूति दिए जाने पर कि अपेक्षित किए जाने पर वह उपसंजात होगा न्यायालय उसे छोड़ सकेगा ।

(3) उपनियम (1) के अधीन जांच की समाप्ति पर न्यायालय धारा 51 के उपबन्धों और इस संहिता के अन्य उपबन्धों के अधीन रहते हुए निर्णीतऋणी के सिविल कारागार में निरुद्ध किए जाने का आदेश कर

सकेगा और उस दशा में जब वह पहले से ही गिरफ्तारी में नहीं है उसे गिरफ्तार कराएगा:

परन्तु निर्णीतऋणी को डिक्री की तुष्टि करने का अवसर देने के लिए न्यायालय निरोध का आदेश करने के पहले निर्णीतऋणी को न्यायालय के अधिकारी की अभिरक्षा में पन्द्रह दिन से अनधिक विनिर्दिष्ट अवधि के लिए रहने दे सकेगा या उसके विनिर्दिष्ट अवधि के अवसान पर उपसंजात होने के लिए , यदि डिक्री की तुष्टि उससे पहले ही न कर दी गई हो तो ,उसके द्वारा न्यायालय को समाधानप्रद रूप में प्रतिभूति दिए जाने पर उसे छोड़ सकेगा ।

(4) इस नियम के अधीन छोड़ गया निर्णीतऋणी पुनः गिरफ्तार किया जा सकेगा ।

(5) जब न्यायालय उपनियम (3) के अधिन निरोध का आदेश न करे तब वह आवेदन को नामंजूर करेगा और यदि निर्णीतऋणी गिरफ्तारी में हो तो उसको छोड़े जाने का निदेश देगा।]

27. उपरोक्त प्रावधानों के अवलोकन से यह पता चलता है कि सि.प्र.सं., 1908 की धारा 51 में निष्पादन के चार मुख्य तरीके निर्धारित किए गए हैं:

- i. विशेष रूप से निर्धारित संपत्ति के वितरण द्वारा;
- ii. संपत्ति की कुर्की और विक्रय द्वारा;
- iii. धन आदेश के निष्पादन में जेल में निरोध; या
- iv. प्राप्तकर्ता की नियुक्ति।

28. **धारा 51 के परंतुक** में किसी भी व्यक्ति को सिविल कारावास में हिरासत में रखने का आदेश देने से पहले *दोहरे परीक्षण* को पूरा करने का निर्देश दिया गया है; *अर्थात्, सबसे पहले*, निर्णित ऋणी को यह समझाने के लिए कारण बताने का अवसर दिया जाता है कि उसे जेल में क्यों नहीं रखा जाना चाहिए। दूसरा

यह है कि न्यायालय जब किसी एक स्थिति पर संतोषजनक रूप से पहुँचता है, जिसे लिखित में अभिलिखित करना चाहिए, कि निर्णित ऋणी डिक्री की तारीख से राशि का या उसके पर्याप्त हिस्से का भुगतान करना चाहता और भुगतान करने से मना करता है या उसकी उपेक्षा करता है या वह पैसे हस्तांतरित करने वाला है या उसके फरार होना की संभावना है, तभी निर्णित ऋणी की हिरासत निर्देशित की जा सकती है।

29. सि.प्र.सं. के आदेश XXI के नियम 37 में गिरफ्तारी के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया की व्याख्या की गई है। इसमें कहा गया है कि डिक्री धारक द्वारा निर्णित ऋणी की गिरफ्तारी के लिए दायर किए जा रहे आवेदन पर प्रक्रिया शुरू की जाए और कारण बताने के लिए एक नोटिस जारी किया जाए कि उसे सिविल कारावास में क्यों नहीं रखा जाना चाहिए हालांकि उसकी उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए गिरफ्तारी के वारंट जारी किए जा सकते हैं जहां न्यायालय को शपथ पत्र से या अन्यथा संतुष्ट किया जाता है, कि उसके फरार होने या निष्पादन में देरी करने और आदेशों के अनुपालन से बचने के उद्देश्य से न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को छोड़ने की संभावना है। नियम 37(2) के तहत जारी गिरफ्तारी वारंट केवल नियम 40 सि.प्र.सं. के तहत अनिवार्य जांच से गुजरने के लिए निर्णित ऋणी की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए है। ऐसे मामले में, न्यायालय के लिए अपने कारणों को दर्ज करना आवश्यक है क्योंकि

अस्पष्ट आदेश किसी व्यक्ति के खिलाफ मनमानी और कठोर कार्रवाई के रूप में अच्छा है जो उसे कानून की उचित प्रक्रिया के विपरीत स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार से वंचित करता है। यह अनिवार्य प्रावधान प्राकृतिक न्याय और दोनों पक्षों को सुनने के सिद्धांत का पालन करते हुए, संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित व्यक्ति के स्वतंत्रता के अधिकार के संरक्षण को सुनिश्चित करता है, जैसा कि पंजाब और हरयाणा के उच्च न्यायालय द्वारा राजेश अरोडा (पूर्वोक्त) के मामले में देखा गया ।

30. **सि.प्र.सं. का आदेश XXI का नियम 40** में व्यक्ति को जेल भेजने से पहले अनिवार्य जांच करने की प्रक्रिया का भी प्रावधान है। न्यायालय के समक्ष नियम 37 के तहत निर्णित ऋणी की उपस्थिति सुनिश्चित करने पर न्यायालय द्वारा ऐसे सभी साक्ष्य लिए जाने चाहिए जो डिक्री धारक द्वारा निष्पादन के लिए उसके आवेदन के समर्थन में प्रस्तुत किए जा सकें। इसके बाद, निर्णित ऋणी को यह भी कारण बताया जाएगा कि उसे सिविल जेल में क्यों नहीं भेजा जाना चाहिए। जब तक जाँच चल रही हो, निर्णित ऋणी को या तो प्रतिभूति प्रस्तुत करने पर रिहा किया जा सकता है या गिरफ्तार किया जा सकता है लेकिन यह अवधि 15 दिनों से अधिक नहीं होगी। एक बार जांच समाप्त हो जाने के बाद, कारावास का आदेश देने से पहले, न्यायालय अंतिम रूप से सिविल कारावास का निर्देश देने से पहले, सुरक्षा प्रस्तुत करने पर डिक्री को संतुष्ट करने का अवसर देगा। नियम 40

का उप-नियम 3 धारा 51 के प्रावधानों के लिए सिविल जेल में निर्णित ऋणी को हिरासत में रखने की न्यायालय की शक्ति का विषय है। *इसलिए, न्यायालय तब तक निरोध का आदेश नहीं दे सकता जब तक कि वह संतुष्ट न हो कि धारा 51 के परंतुक में तीनो शर्तों में से कोई भी मौजूद है।*

31. उपरोक्त नियमों में निर्धारित विस्तृत प्रक्रिया से यह बहुत स्पष्ट हो जाता है कि किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को केवल डिक्री धारक के पूछने पर ही कम नहीं किया जा सकता है लेकिन निर्णित ऋणी के अवज्ञाकारी रवैये का सामना करने पर प्रक्रिया का ईमानदारी से पालन करने के बाद ही गिरफ्तारी का सहारा लिया जाना चाहिए।

32. आक्षेपित आदेश यह नहीं दर्शाता है कि अपीलार्थी/पति को यह समझाने के लिए कोई कारण-बताओ नोटिस दिया गया था कि उसे सिविल कारावास में क्यों नहीं भेजा जाना चाहिए। इसके अलावा, लिखित रूप में कोई संतुष्टि दर्ज नहीं की गई है कि आदेश की तारीख से अपीलार्थी/पति के पास धन का भुगतान करने का साधन है, लेकिन वह जानबूझकर उपेक्षा कर रहा है या भुगतान करने से मना कर रहा है। जब तक यह पता नहीं चलता कि भुगतान न करना अपीलकर्ता/पति के जानबूझकर किए गए आचरण के कारण है जिसका उद्देश्य प्रत्यर्थी के वास्तविक दावे को विफल करना है तब तक उसे सिविल कारावास में भेजने का आदेश न तो उचित है और न ही प्रमाणिक है।

33. विद्वान न्यायाधीश, पारिवारिक न्यायालय अपीलार्थी/पति को सिविल कारावास में हिरासत में रखने का निर्देश देने से पहले सि.प्र.सं, 1908 के नियम 37 और 40 के साथ पठित धारा 51 के तहत निर्धारित प्रक्रिया का पालन करने में विफल रहा है।

III. क्या किसी निर्णीत ऋणी को रखरखाव की वसूली के लिए बार-बार निष्पादन याचिकाओं में तीन महीने से अधिक के लिए जेल भेजा जा सकता है जो समय-समय पर जमा हो सकते हैं:

34. अपीलकर्ता ने आगे तर्क दिया है कि एक ही सिविल डिक्री के निष्पादन में किसी व्यक्ति को दोबारा गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है और तीन महीने से अधिक की अवधि के लिए जेल नहीं भेजा जा सकता है।

35. एक दिलचस्प सवाल जो इस न्यायालय के विचारण के लिए उठता है वह यह है कि: *क्या किसी धन (भरण-पोषण) डिक्री के निष्पादन के मामले में, किसी व्यक्ति को बाद की निष्पादन याचिका, जो कि उसी भरण-पोषण के आदेश के अधीन जमा हो गयी हों, के माध्यम से तीन महीने से अधिक अवधि के लिए बार-बार कारावास भेजा जा सकता है।*

36. सि.प्र.सं., 1908 की धारा 58(1) में डिक्री के निष्पादन में निर्णीत ऋणी को हिरासत में रखने का प्रावधान है और यह निम्नानुसार है:-

"धारा 58: नजरबंदी और रिहाई।—

(1) डिक्री के निष्पादन में सिविल जेल में हिरासत में लिए गए प्रत्येक व्यक्ति को इस प्रकार हिरासत में रखा जाएगा,

(क) जहां डिक्री तीन महीने से अधिक की अवधि के लिए [पाँच हजार रुपये] से अधिक की राशि के भुगतान के लिए है, और

(ख) जहां डिक्री दो हजार रुपये से अधिक की राशि के भुगतान के लिए है, लेकिन छह सप्ताह से अधिक की अवधि के लिए पाँच हजार रुपये से अधिक नहीं है।

(2) इस धारा के तहत हिरासत से रिहा निर्णित ऋणी केवल उसकी रिहाई के कारण अपने ऋण से मुक्त नहीं किया जाएगा, बल्कि वह उस डिक्री के तहत फिर से गिरफ्तार होने के लिए उत्तरदायी नहीं होगा जिसके निष्पादन में उसे सिविल जेल में हिरासत में लिया गया था।

37. सि.प्र.सं.,1908 की धारा 58(1) के अनुसार, मनी डिक्री के निष्पादन में किसी व्यक्ति को तीन महीने से अधिक की अवधि के लिए सिविल कारावास दिया जा सकता है, यदि भुगतान 5,000/- रुपये से अधिक है। इसके अलावा, सि.प्र.सं.,1908 की धारा 58 के खंड 2 के स्पष्ट शब्दों के अनुसार निर्णित ऋणी को 'उस डिक्री के तहत दोबारा गिरफ्तार नहीं किया जा सकता जिसके निष्पादन में उसे सिविल कारावास में हिरासत में लिया गया था।

38. दामोदर शालिग्राम (पूर्वोक्त) के मामले में वादी ने एक डिक्री प्राप्त किया था जिसमें उसे तीन वार्षिक किश्तों में धन की वसूली करने का अधिकार दिया गया था। उन्होंने जुर्माने की राशि के लिए गिरफ्तारी का वारंट प्राप्त किया जिसके अनुसार प्रतिवादी में से एक को गिरफ्तार किया गया और अगले दिन वादी के अनुरोध पर उसे आरोपमुक्त भी कर दिया गया। पहली किश्त देय होने के बाद

डिक्री धारक ने फिर से निर्णित ऋणी की गिरफ्तारी की मांग की क्योंकि उसने भुगतान में चूक की थी। यह अभिनिर्धारित किया गया कि सि.प्र.सं की धारा 341 (पुराना सि.प्र.सं. जिसमें समान प्रावधान है) की सरल भाषा में कहा गया है कि किसी निर्णित ऋणी को उस डिक्री के तहत फिर से गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है जिसके निष्पादन में वह पहले से ही जेल में था। व्याख्या खंड में दी गई डिक्री की परिभाषा के साथ पढ़ा गया यह खंड दर्शाता है कि विधायिका का इरादा था कि निर्णित ऋणी को एक ही डिक्री के तहत एक से अधिक बार कैद नहीं किया जाना चाहिए। इसके अलावा, सि.प्र.सं. की धारा 224(ख), 230 और 235 में आंशिक रूप से या पूरी तरह से निष्पादित डिक्री के संबंध में डिक्री का निष्पादन, डिक्री को निष्पादित करने और डिक्री को लागू करने शब्द का उपयोग किया गया है।

39. धनलक्ष्मी अम्मल (पूर्वोक्त) के मामले में इसी तरह का एक प्रश्न न्यायालय के विचार के लिए आया कि क्या निर्णितऋणी/पति रखरखाव डिक्री के लिए निष्पादन याचिका में छह महीने की अवधि के लिए जेल के लिए प्रतिबद्ध होने के बाद अर्थात् सि.प्र.सं. (पुरानी संहिता) की धारा 58(2) के तहत अधिकतम अवधि, गुजारा भत्ता वसूलने के लिए एक अन्य निष्पादन याचिका में सिविल जेल में पुनः भेजा जा सकता है।

40. यह तर्क कि रखरखाव डिक्री को एक समग्र डिक्री के रूप में माना जा सकता है जिसमें अलग-अलग मनी डिक्री के समूह शामिल हैं जिसमें पुनः गिरफ्तारी और पुनः प्रतिबद्धता संभव है जो न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था। यह देखा गया कि मिश्रित डिक्री इमली या आम के पेड़ की तरह होता है जिसकी कई शाखाएँ होती हैं जबकि अन्य डिक्रियां नारियल के पेड़ की तरह होते हैं जिसकी कोई शाखा नहीं होती है। लेकिन दोनों प्रकार के पेड़ों में मुख्य तना होता है जिसे जड़ से काटा जा सकता है। यद्यपि मूल शाखाएँ कई हो सकती हैं और नई शाखाएँ अस्तित्व में आ सकती हैं लेकिन तना और जड़ एक हैं। इस प्रकार, चूंकि पेड़ एक ही हैं इसलिए सिविल कारावास में पुनः गिरफ्तारी और पुनः समर्पण पर सि.प्र.सं. की धारा 58(2) के तहत रोक लगाई जाएगी। यह देखा गया कि भरण-पोषण डिक्री का मूल वह तारीख है जब इसे पारित किया गया था और इसका अंत तब होता है जब डिक्री धारक की मृत्यु हो जाती है।

41. भरण-पोषण के भुगतान में बार-बार चूक करने पर किसी व्यक्ति को बार-बार जेल भेजने की स्थिति विक्रमादित्य की कहानी के समान थी कि वह छह महीने एक स्थान पर और छह महीने दूसरे स्थान पर बिताता था, सिवाय इसके कि वह शहर और जंगल में होने के बजाय कारावास में होगा और छिपा रहेगा । इस प्रकार, यह देखा गया कि चूक के लिए कारावास से रिहा होने पर पत्नी पति को

इस बीच की अवधि के लिए मिलने वाले रख-रखाव के लिए फिर से कारावास नहीं भेज सकती।

42. इसके अलावा, यह याचिका कि डिक्री धारक महिला न्यायालय का दरवाजा खटखटाती है और अपने पति की अपने खर्च पर कारावास की मांग करती है, यह उसकी दयनीय और हताश स्थिति को दर्शाती है जो यह कहते हुए खारिज कर दिया गया कि कारावास पर जोर देकर पत्नी यह सुनिश्चित करके खुशी प्राप्त करना चाहती है कि वह अपनी दूसरी पत्नी के साथ न रहे जिससे उसने विवाह किया है। यह निष्कर्ष निकाला गया कि न्यायालय को भावनाओं द्वारा निर्देशित नहीं किया जा सकता है लेकिन उन्हें कानून के अनिवार्य प्रावधानों की सीमा के भीतर सख्ती से काम करना होगा। इस मामले में, दामोदर शालियाम (पूर्वोक्त) का संदर्भ दिया गया था जिसमें यह देखा गया था कि "इस धारा का इरादा स्पष्ट रूप से गिरफ्तारी की शक्ति के प्रतिबंध और स्वतंत्रता के पक्ष में काम करना है और इसे शर्तों के सरल अर्थ के अनुसार समझा जाना चाहिए।

43. आज के समय में जहाँ विधि का शासन मार्गदर्शक मौलिक मानदंड है और हर एक व्यक्ति के अधिकारों को संविधान के तहत सुरक्षा प्राप्त है; वहां विधि की प्रक्रिया का अनुपालन किए बिना व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का अतिलंघन नहीं हो सकता। गिरफ्तारी और कारावास का सहारा संसाधन होने के बावजूद रखरखाव का भुगतान करने से अवज्ञाकारी अस्वीकृति के दुर्लभ मामलों में लिया जाना

चाहिए और यहां तक कि जब इस तरह के कारावास की मंजूरी दी जाती है तो इसे अधिकतम तीन महीने की अवधि तक रोका जाता है। ऐसा नहीं है कि व्यक्ति को तीन महीने का कारावास भुगतने के बाद ऋण समाप्त हो जाता है और डिक्री धारक वसूली के अन्य साधनों का सहारा ले सकता है जैसे कि निर्णित ऋणी की संपत्ति की कुर्की और विक्रय।

44. समीरन सेन (पूर्वोक्त) के मामले में, जिसमें पति को भरण-पोषण की बकाया राशि का भुगतान करने में विफल रहने के लिए सिविल जेल में रखा गया था, न्यायालय ने यह कहा कि सि.प्र.सं. की धारा 58 के अनुसार, किसी व्यक्ति को किसी भी परिस्थिति में तीन महीने की अवधि से अधिक की डिक्री के निष्पादन के लिए सिविल जेल में नहीं रखा जा सकता है। यदि ऐसा कोई आदेश किसी सिविल न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति को तीन महीने की अवधि से अधिक कारावास का निर्देश देते हुए दिया गया था तो यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन होगा। आगे यह देखा गया कि जबकि धारा 58(2) में यह प्रावधान है कि केवल इसलिए कि निर्णित ऋणी को सिविल जेल में कारावास में रखा गया था, उसके ऋण को निर्वहन करने के लिए नहीं रखा जा सकता था, तथापि, इसमें यह भी प्रावधान है कि निर्णित ऋणी डिक्री के तहत फिर से गिरफ्तार होने के लिए उत्तरदायी नहीं होगा जिसके निष्पादन में वह पहले से ही सिविल कारावास में कैद था।

45. इसी तरह, संतोष कुमार मोडे व अन्य बनाम अद्वैता बल्लव सत्पथी एआईआर 1992 उडी 29 के मामले में यह देखा गया था कि ऋण को केवल इसलिए निर्वहन करने के लिए नहीं रखा जा सकता है क्योंकि निर्णित ऋणी को सि.प्र.सं. की धारा 58(2) के तहत पूरी अवधि के लिए सिविल कारावास में हिरासत में रखा गया था। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऋण का निर्वहन या तो कानून के संचालन या डिक्री-धारक की स्पष्ट इच्छा से किया जा सकता है।

46. इस प्रकार हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि एक ही मुकदमे में डिक्री के निष्पादन में सिविल कारावास में कुल अवधि तीन महीने से अधिक नहीं हो सकती। यद्यपि डिक्री को किशतों में निष्पादित किया जा सकता है जैसा कि रखरखाव आदेशों के मामले में किया जाता है, लेकिन डिक्री/आदेश केवल एक होने के कारण, जैसा कि निर्धारित किया गया है गिरफ्तारी अधिकतम तीन महीने की अवधि के लिए की जा सकती है। यद्यपि निष्पादन याचिका भरण-पोषण की प्राप्ति के लिए दायर की जा सकती है जो समय-समय पर देय हो सकती है लेकिन इससे धारा 58(2) द्वारा निर्धारित अधिकतम अवधि से अधिक कारावास की मांग करने का अधिकार नहीं मिलेगा। एक व्यक्ति जिसे पहले ही तीन महीने की अवधि के लिए सिविल कारावास में भेजा जा चुका है उसे दूसरी बार उसी डिक्री के निष्पादन में फिर से सिविल कारावास में नहीं भेजा जा सकता

है। इसके अलावा, केवल इसलिए कि निर्णित ऋणी को सि.प्र.सं. की धारा 58(2) के तहत प्रदान किए गए तीन महीने की पूरी अवधि के लिए सिविल कारावास में हिरासत में रखा गया था, उसके ऋण को निर्वहन नहीं कहा जा सकता है, जिसे अभी भी धारा में प्रदान किए गए अन्य साधनों के माध्यम से वसूला जा सकता है।

47. वर्तमान मामले में, दिनांक 28.09.2015 के आदेश के प्रत्यर्थी द्वारा दायर निष्पादन याचिका सं. 27/2018 में, अपीलकर्ता/पति को पहले ही तीन महीने की अवधि के लिए दिनांक 24.02.2021 को सिविल कारावास में भेज दिया गया है, जिससे वह गुजरा है। जैसा कि प्रत्यर्थी ने फिर से उसी आदेश दिनांक 28.09.2015 के संख्या 11/2020 के साथ निष्पादन याचिका दायर की है, अपीलकर्ता को रखरखाव के बकाया के लिए उसी डिक्री के निष्पादन में फिर से सिविल कारावास का निर्देश नहीं दिया जा सकता है जो बाद में देय हो गया है।

एस.125 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत सिविल कारावास:

48. अपीलकर्ता/पति ने सही तर्क दिया है कि उसे बार-बार जेल भेजा जा सकता था, लेकिन यह केवल दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (इसके बाद "सि.प्र.सं., 1973" के रूप में संदर्भित) की धारा 125 के तहत दिए गए रखरखाव के आदेश के निष्पादन में ही स्वीकार्य होगा।

49. दं.प्र.सं., 1973 की धारा 125(3) के तहत;--

धारा 125(3):—

(3) यदि इस प्रकार आदेश किया हुआ कोई व्यक्ति आदेश का अनुपालन करने के लिए पर्याप्त कारण के बिना विफल रहता है तो ऐसे किसी भी दंडाधिकारी आदेश के प्रत्येक उल्लंघन के लिए, जुर्माना लगाने के लिए प्रदान किए गए तरीके से देय राशि वसूलने के लिए वारंट जारी कर सकता है और ऐसे व्यक्ति को प्रत्येक महीने के पूरे या किसी भाग के लिए सजा दे सकता है [रखरखाव या अंतरिम रखरखाव और कार्यवाही के खर्चों के लिए भत्ता, जैसा भी मामला हो,] वारंट के निष्पादन के बाद तक भुगतान नहीं होने पर, एक अवधि के लिए कारावास, जिसे एक महीने तक बढ़ाया जा सकता है या भुगतान होने तक, यदि पहले किया गया हो:

बशर्ते कि इस धारा के तहत देय किसी भी राशि की वसूली के लिए कोई वारंट तब तक जारी नहीं किया जाएगा जब तक कि न्यायालय को उस तारीख से एक वर्ष की अवधि के भीतर ऐसी राशि वसूल करने के लिए आवेदन नहीं किया जाता है जिस दिन वह देय हुई थी:

बशर्ते कि यदि ऐसा व्यक्ति अपनी पत्नी को उसके साथ रहने की शर्त पर रखने की पेशकश करता है और वह उसके साथ रहना अस्वीकार करती है, तो यह दंडाधिकारी उसके द्वारा अस्वीकृति के किसी भी आधार पर विचार कर सकता है और इस तरह के प्रस्ताव के बावजूद इस धारा के तहत आदेश दे सकता है, यदि वह संतुष्ट है कि ऐसा करने के लिए उचित आधार है।

50. उपरोक्त धारा के अवलोकन मात्र से यह स्पष्ट है कि भरण-पोषण के भुगतान में हर महीने की चूक के लिए, चूककर्ता को एक महीने के कारावास में भेजा जा सकता है। इसलिए, हर महीने के लिए, चूककर्ता को एक महीने के कारावास में भेजा जा सकता है।

51. सि.प्र.सं. की धारा 125 और एचएमए की धारा 24 के तहत एक आदेश के लिए निष्पादन कार्यवाही के बीच स्पष्ट अंतर, संबंधित अनुभागों में इस्तेमाल की

गई भाषा से स्पष्ट है। वर्तमान आदेश एचएमए की धारा 24 के तहत होने के कारण निष्पादन याचिका सि.प्र.सं., 1908 के प्रावधानों द्वारा शासित है जो व्यक्ति के अधिकतम तीन महीने के सिविल कारावास की अवधि से गुजरने के बाद फिर से गिरफ्तारी का प्रावधान नहीं करता है।

52. इसलिए, हम पाते हैं कि अपीलकर्ता/पति को उसी भरण-पोषण डिक्री के अनुपालन में तीन महीने की अतिरिक्त अवधि के लिए सिविल कारावास की सजा देने का आक्षेपित आदेश उचित नहीं है। दिनांक 30.09.2022 का आक्षेपित आदेश निरस्त किया जाता है।

53. इस निर्णय से विकेन्द्रित होने से पहले परिवार न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश द्वारा दिनांक 30.09.2022 को दोपहर 3.30 बजे पारित आदेश में यह ध्यान दिया गया है कि निर्णीत ऋणी के विद्वान अधिवक्ता डिक्री धारक के नाम से 2 लाख रुपये के डिमांड ड्राफ्ट के साथ उपस्थित हुए और प्रस्तुत किया कि निर्णीत ऋणी को हिरासत में लेने के आदेश को तब तक निलंबित रखा जाए जब तक वह डिक्रीधारक को दिए गए मासिक रखरखाव के मामले में सिविल कारावास की विधिक स्थिती के सम्बन्ध में स्पष्टीकरण हेतु उच्च न्यायालय का दरवाजा नहीं खटखटाते। विद्वान न्यायाधीश साधारण व्यक्ति नहीं है, वह विधिक स्थिति जानने के लिए कर्तव्यबद्ध है और निर्णीत ऋणी के लिए विद्वान अधिवक्ता के उक्त प्रस्तुतिकरण को दर्ज करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। चूंकि विद्वान

न्यायाधीश ने डिक्रीधारक के पक्ष में 2 लाख रुपये का डिमांड ड्राफ्ट लेने पर निर्णीत ऋणी को हिरासत में लेने के आदेश को निलंबित कर दिया है और सुनवाई की अगली तारीख पर उपस्थित होने के लिए निर्णीत ऋणी का एक अलग वचनपत्र भी दर्ज किया गया था, इसलिए हम ज्यादा टिप्पणी करने से बचते हैं।

54. तदनुसार, वर्तमान अपील को अनुमति दी जाती है और लंबित आवेदन का निपटान किया जाता है।

(नीना बंसल कृष्णा)

न्यायाधीश

(सुरेश कुमार कैत)

न्यायाधीश

फरवरी 1, 2024

एस.शर्मा/एनके

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।